लड़ाई

राजेन्द्र दानी

लड़ाई

ये तब की बात है जब देश में लोकसभा चुनाव संपन्न हो गए थे और उसके प्रत्याशित परिणाम ही आए थे... युवाओं ने, जो पहली बार मतदाता बने थे, जमकर मतदान

किया था। उन्होंने सत्ता बदलकर भी यथास्थिति को पहले से ज्यादा मजबूत कर दिया था और चारों ओर खुशियाँ छा गई थी। वे नहीं जान रहे थे कि सत्ता का हस्तांतरण निदान नहीं है। यहाँ तक कि उनका बेटा भी उनके विपरीत सोचता था और यह तय है कि वर्तमान सत्ता के लिए उसने भी वोट दिया होगा।

आधी नींद में, कड़कड़ाते जाड़े में रजाई में, दुबे श्यामाचरण अनजाने दुख के साथ यही सब सोच रहे थे तब सामने की खिड़की से सुबह का उजाला अंदर आने लगा था। शायद सुबह के सात बज रहे थे। चार साल पहले रिटायर होकर उनकी उम्र अब चौंसठ पार कर रही थी और उनकी चिंताओं का नए समय में कोई स्थानापन्न नहीं था। आज के दौर में वे ऐसे व्यक्ति थे जो सिर्फ पैसे की चिंता नहीं करते बल्कि उनकी चिंताएँ अन्यत्र भी जाती हैं। बिस्तर की सामने की टेबिल पर आँखें खोलने पर उनकी निगाह पड़ी तो देखा कि उनका छोटा बेटा अंकित अपने लैपटाप को चार्ज करने लिए उनकी टेबिल से सटी दीवार पर लगे प्लग से जोड़ रहा था। पिछले तीन-चार साल में घर में इलेक्ट्रॉनिक उपकरण इतने ज्यादा आ गए थे कि कोई प्लग खाली नहीं रहता था इसलिए सुबह-सुबह अंकित को यह कार्रवाई उनके कमरे में करनी पड़ती थी। उनकी नींद खुली देख कर अंकित मुस्कुराया और कहा - "पापा अब उठ जाओ, सात बज चुके हैं।"

वे जल्दी उठें न उठें, अंकित को जल्दी उठना पड़ता था। वह एक मल्टीनेशनल कंपनी में इंजीनियर है। उसे सुबह साढ़े आठ बजे तक काम पर निकलना पड़ता है। बहुत मोटी तनख्वाह ऐसे ही नहीं मिलती, यह वही बताता रहता था। साढ़े आठ बजे सुबह निकलना और रात आठ साढ़े आठ या कभी-कभी नौ तक भी लौटकर आना होता था। श्यामाचरण कभी-कभी चिंतातुर होकर कहते कि 'बेटा यह क्या तुम लोगों की जिंदगी है' तो वह कहता कि 'क्यों, क्या बुराई है इसमें, ...अब पैसे चाहिए तो यह सब तो करना ही पड़ेगा।'

"नहीं, मैं कह रहा था कि बाकी सब सोचने के लिए तुम लोगों के पास वक्त रहता है कि नहीं?" श्यामाचरण जब यह पूछते तो वह उनकी बात का अर्थ न समझते हुए भी बेहद समझदारी भरी मुस्कुराहट के साथ कहता - "बाकी सब क्या...? अभी उसके लिए वक्त कहाँ है... देखेंगे!" उसका रवैया टालने वाला लगता।

श्यामाचरण फिर यह नहीं पूछ पाते कि 'कब देखोगे', या 'कब वक्त मिलेगा तुम्हें'। अंकित सत्ताईस साल का हो गया था। अविवाहित था और कहता था कि जब तक उसके अनुकूल कोई मैच नहीं मिलेगा वह शादी तो नहीं करने वाला। यह अनुकूलता क्या होती है तब श्यामाचरण नहीं समझ पाते। उन्होंने या उनकी पत्नी ने शादी के बाद ही एक-दूसरे के प्रति अनुकूलता बनाई थी और यही आज भी संभव क्यों नहीं हो सकता, यह उनकी समझ के परे था। किसी भी तरह और दूसरे प्रश्नों या बहसों में उसका एक तरह का निर्णायक जबाव होता 'आप नहीं समझेंगे।' यह ठीक था कि वे लैपटाप नहीं समझते थे, सोशल मीडिया पर नहीं जाते थे, उन्हें व्हाट्स-अप नहीं मालूम था, वे चेट नहीं करते थे तो क्या इसका मतलब यह था कि वे कुछ समझते नहीं थे।

फिर ऐसे जबाव से चिढ़ जाना, तैश में आ जाना स्वाभाविक है पर श्यामाचरण की भद्रता यह उन्हें नहीं करने देती और वे चुप लगा जाते हैं। इस परिस्थिति का जिक्र जब वे अपने हम उम्र मित्रों से करते हैं तो पाते हैं कि उनके घरों में भी यही हो रहा है और सब आश्चर्य से भरे हुए हैं।

"अब उठिए भी!" पत्नी ने बिस्तर के पास आकर जब यह कहा तो वे चौंक कर उठ बैठे। थोड़ी देर में जब खड़े हुए तो दोनों पैरों की एड़ियों और घुटनों में दर्द की तेज लहर दौड़ गई। रिटायरमेंट के पहले से ही वे आहिस्ता-आहिस्ता आर्थराइटिस के मरीज होते चले गए थे और अब वह बीमारी अपने शबाब पर पहुँच गई है। पिछले लगभग बीस दिनों से वे इस दर्द की वजह से मार्निंग वॉक पर नहीं जा पाए। चार-पाँच दिन पहले जब वे अपने आर्थोपेडिक डॉक्टर से अपना मर्ज बताने गए और पैदल न चल पाने की मजबूरी का निदान बताने कहा तो उसने श्यामाचरण के पैरों की ओर गौर से देखा और कहा - "इन जूतों से काम नहीं चलेगा, आप अच्छे जूते पहनिए ताकि आराम से चल सकें।"

"कौन से जूते पहनने चाहिए।" उन्होंने तपाक से पूछा। हालाँकि वे बाटा के अच्छे जूते पहने हुए थे।

डाक्टर ने एक घड़ी सोचा फिर कहा - "आप नाईकी या ली कूपर या लोटो के पहनिए, उससे बहुत कंफरटेबल महसूस करेंगे।"

वे शंकित हो गए और पूछा - 'वे शायद काफी महँगे होंगे।"

इस पर डाक्टर ने उन्हें विस्मय से देखा और कहा - "तो क्या होता है... यू आर वेल टु डू।"

अब रहते हुए भी कोई आगे की शंका वे डाक्टर के सामने प्रकट नहीं कर सकते थे इसलिए चुप रहकर उन्होंने पाँच सौ रुपये उनका शुल्क चुकाया और बाहर आ गए।

पता नहीं क्यों, घर लौटते हुए वे सोच रहे थे कि दूसरों की सलाह मान लेने से आदमी 'वेल टु डू' हो जाता है। वे यह भी जान रहे थे कि उन्होंने, बिना हिचक के डॉक्टर को पाँच सौ रुपये दे दिए थे इसलिए वह गलत भी कहाँ बोल रहा था। डॉक्टर के अँग्रेजी में कहे गए वाक्य का वास्तविक अर्थ भी वे निकालना चाह रहे थे। चूँकि वेल का एक अर्थ निरोग भी होता है इसलिए वे निरोग जैसे अर्थ को ग्रहण नहीं कर सकते थे क्योंकि वे बीमार थे और बीमारी से उबरने के लिए भी तो डॉक्टर ने कुछ नहीं बताया था। पता नहीं कैसे उनके सोचने के आखिरी छोर पर केवल एक शब्द गूँज रहा था 'व्यर्थ!'।

इसीलिए एक तरह से वे डाक्टर की सलाह को भुला देना चाहते थे लेकिन आज जितना दर्द उन्होंने घुटनों और एड़ियों में महसूस किया उससे उनका मनोबल डगमगा गया और लगा कि डाक्टर की सलाह मानकर देखा जाए। वे दर्द के बावजूद जल्दी से टॉयलेट में चले गए। दस मिनिट बात फ्रेश होकर डायनिंग रूम में पहुँचे तो देखा अंकित टेबिल पर लेपटाप रखकर उसमें नजरें गड़ाए कुछ कर रहा है, साथ में नाश्ता भी करता जा रहा है। वे जब उसके सामने वाली चेयर पर बैठे तो पत्नी ने उनके सामने भी गरमा गरम चाय का प्याला और टोस्ट की प्लेट रख दी।

चाय की पहली चुस्की लेकर उन्होंने बिना किसी भूमिका के अंकित से कहा - "डाक्टर ने कहा है कि अच्छे जूते ले लूँ तो चलने में आसानी होगी, तुम क्या सोचते हो?"

अंकित की नजरें लेपटाप से हटीं नहीं और उसने कहा - "जब डाक्टर ने कहा है तो ले लीजिए, हर्ज ही क्या है... और फिर मेरे सोचने से क्या होगा।"

"नही मैं कह रहा था कि मेरे ये जूते भी तो नए हैं और कोई सस्ते भी नहीं हैं।" उन्होंने कुछ-कुछ हिचकते हुए कहा।

अब जाकर अंकित की नजरे उठीं और उसने श्यामाचरण की ओर एक व्यंग्यात्मक मुस्कान के साथ देखा और कहा - "महँगे और सस्ते का सवाल आप लोग बार-बार क्यों उठाते हैं, अभी तो सवाल आपको आराम मिले इसका है, इसलिए जो डाक्टर कहते हैं वह करके देख लीजिए।" यह कहते हुए उसने अपना लेपटाप बंद किया और टेबिल से उठकर अपने कमरे की ओर चला गया।

थोड़ी देर में लौटकर आया तो उसके हाथ में कुछ रुपये थे। उन्हें श्यामाचरण को देते हुए उसने कहा - "ये दस हजार रुपये हैं, जैसा डाक्टर कहते हैं वैसा जूता खरीद लीजिए।"

उन्होंने जब तक चाय और टोस्ट को समाप्त किया तब तक अंकित वहाँ से जा चुका था। यह सुखकर था कि उन्हें बेटे ने अपने दर्द से उबरने के लिए जरूरत से ज्यादा पैसे दे दिए थे लेकिन श्यामाचरण इससे अलग भी कोई अपेक्षा उससे पाले हुए रहते। अंकित के इस तरह के व्यवहार पर जब वह पत्नी से चर्चा करना चाहते तो वह भी साथ नहीं देती और हँसते हुए कहती कि - "देखो कलयुग में भी ऐसी औलाद है आपकी, इससे संतोष क्यों नहीं करते, पता नहीं आपको और क्या चाहिए?"

इस प्रश्न का जबाव पत्नी को देना श्यामाचरण के लिए टेढ़ी खीर था। बात यह बिल्कुल नहीं थी कि वे समझ नहीं पातीं बल्कि होता यह था कि बेटे के प्रति उनकी जो ममता, वात्सल्य या स्नेह था उसका कवच इतना ठोस था कि श्यामाचरण उसके आर-पार नहीं हो पाते थे और इसके आगे की जुगत उन्हें सूझती नहीं थी। उस दिन भी यही हुआ।

अब पत्नी भी वहाँ नहीं थी और वे टेबिल पर अकेले बच गए थे। टेबिल पर ही दो-तीन अँग्रेजी और हिंदी के अखबार बिखरे पड़े थे। उन्होंने हिंदी का एक अखबार उठाया और

पढ़ने लगे। नए प्रधानमंत्री किस दिन शपथ लेंगे इसकी खबर वहा प्रमुखता से छपी थी और संसदीय दल का नेता चुनने के बाद उन्होंने भावुकता से भरी बातों के साथ गरीबों को निराशा से उबरने की अपील की थी। यह सब पढ़कर वे अचानक बड़बड़ाने से लगे, जिसमें से बहुत अस्पष्ट सी ध्वनि निकल रही थी कि 'वे यह सब जानते थे, यही होने वाला था' इत्यादि। पिछली रात भी उन्होंने यह सब टेलीविजन पर देखा था इसलिए उनकी दिलचस्पी उस खबर पर नहीं थी। उन्होंने पहला पन्ना तुरंत पलट दिया।

अगले पूरे पन्ने पर एक जूते का विज्ञापन था, जिसे पलटते-पलटते वे रुक गए। उन्हें याद आ गया कि उन्हें डाक्टर का सुझाया जूता खरीदना है। वे विज्ञापन को ध्यान से देखने लगे। अखबार के आधे से अधिक पृष्ठ पर एक जोड़ी जूते का चित्र था। नीचे अँग्रेजी में लिखा था 'नाइकी'। जूते के चित्र को उन्होंने ध्यान से देखा और फिर बड़बड़ाए 'इसमें क्या खासियत है, पता नहीं।'

देखते-देखते वे पन्ने के निचले हिस्से में चले गए और वहाँ उन्होंने पढ़ा 'स्टाक क्लियरेंस सेल, अप-टू फिफ्टी परशेंट ऑफ'। पढ़कर अचानक उनके चेहरे पर एक मुस्कान फैल गई। उनको लगा वे सौभाग्यशाली हैं कि यह सेल अभी हो रही है। वे अखबार को गौर से देखते हुए फिर बुदबुदाए - 'कहाँ पर हो रही है ये सेल, हाँ केंट में, स्टैंडर्ड शूज में, ठीक है।' उन्होंने फिर अखबार को रखा और तुरंत उठ खड़े हुए।

लगभग दिन के ग्यारह बजे तैयार होकर वे अपनी स्कूटी से स्टैंडर्ड शूज की दुकान पर पहुँच गए। वहाँ उन्होंने पाया कि सभी बड़े ब्रांड के जूते उपलब्ध हैं। शो विंडो में जो जूते डिस्प्ले थे उनके नीचे उनके प्राइजटेग भी लगे हुए थे। यह सब देखते हुए उन्होंने जाना कि नाइकी के जूते सबसे महँगे है। उन्होंने दुबारा सोचा कि जब फिफ्टी परशेंट ऑफ में मिल रहे हैं तो क्यों न सबसे महँगे खरीदे जाएँ।

पचास प्रतिशत की छूट के बाद वह जूता उन्हें साढ़े चार हजार रुपये में मिला। शॉप के अंदर उसे पहनकर वे पच्चीस-तीस कदम चले। थोड़ी देर को उन्हें लगा डाक्टर सही कह रहा था, इसमें तो वास्तव में आराम लग रहा है। उन्हें खुशी हुई। फिर उन्होंने देर नहीं की और वह जूता खरीद लिया। स्टैंडर्ड शूज की एक रसीद साढ़े चार हजार रुपये चुकाने के बाद उन्हें मिली। उन्होंने बिना देर किए खुशी-खुशी घर का रास्ता पकड़ा।

उन्हें अब अच्छा लग रहा था यह सोचकर कि वे कल से फिर मॉर्निंग वॉक के लिए जा सकेंगे। पत्नी और अंकित को उन्होंने दूसरे रोज मार्निंग वॉक पर जाने से पहले पूर्ववत खुशी से वह जूता पहनकर दिखाया और वॉक के लिए निकल गए। थोड़े से खुश और थोड़े से आश्चर्यचकित अंकित और उनकी पत्नी उन्हें जाते हुए देखने के लिए घर के मेनगेट तक चले आए।

लेकिन उनके अच्छे दिन तो आ नहीं गए थे कि उन्हें स्थायी आराम लगता इसलिए चौथे-पाँचवे दिन से ही उन्हें लगा कि वे किसी तरह के मनोवैज्ञानिक भ्रम में थे और वास्तव में उन्हें आराम नहीं है और पैरों का दर्द पहले से ज्यादा बढ़ रहा है। वे निश्चिंत घर वालों के सामने अब कुछ कह नहीं सकते थे। वे अपने आपको एक अजीब सी शर्मिंदगी से घिरा हुआ महसूस कर रहे थे। पर बर्दाश्त की एक सीमा होती है। वे एक दिन उसे पार कर गए और एक सुबह डायनिंग टेबिल पर चाय पीते हुए उन्होंने अंकित और उसकी माँ से यह बात कह दी कि उन्हें इन जूतों को पहनने के बाद भी आराम नहीं मिल रहा है।

यह सुनकर उनकी पत्नी ने तो नहीं लेकिन अंकित ने उन्हें बहुत गौर से देखा। उसकी उस नजर को उन्होंने पहचान लिया और अपने भीतर उसके मिल-जुले भाव को गहराई से महसूस किया। अंकित की नजर में कोई चिढ़, एक अनैतिक हिकारत और कमोवेश गुस्से का मिला जुला भाव था। पर आश्चर्यजनक रूप से किसी तरह का दुख नहीं था। इन सबको छिपाने की कोशिश करते हुए एक व्यंग्यात्मक भाव से उसने कहा - "लीजिए, यानी आपकी परेशानी फिर शुरू हो गई!"

"फिर शुरू नहीं हुई, गई ही नहीं तो शुरू कहाँ से होती।" उन्होंने अपनी चिढ़ को छिपाते हुए सहजता से कहा।

"फिर पिछले चार पाँच दिन तो आपने कोई शिकायत नहीं की?" अंकित ने तत्परता से पूछा। "वह मेरा भ्रम रहा होगा।" उन्होंने नजरें नीचे करके कहा।

उन्हें लग रहा था कि डाक्टर और जूते की दुकान वाले, दोनों ने मिलकर उन्हें बेवकूफ बना दिया है। पर उनके इस जबाव को सुनकर अंकित ने उन्हें काफी देर तक पहले से

ज्यादा गहरी नजरों से देखा फिर कुछ सोचते हुए कहा - "कहीं डुप्लीकेट तो नहीं ले आए आप! ...दिखाइए जूते कहाँ हैं?"

वे जल्दी-जल्दी सिट आउट तक गए और जूते उठा लाए, फिर अंकित के सामने उन्हें रख दिया। अंकित ने बारी-बारी दोनों पैरों के जूतों को उठाकर ध्यान से देखा और कुछ-कुछ बड़बड़ाते हुए कहा - "देखने से तो नहीं लगता, पर मुझे लगता है, डुप्लीकेट ही हैं।"

उसकी बड़बड़ाहट को श्यामाचरण ने ध्यान से सुन लिया था इसलिए कहा - "तुमने कैसे पहचान लिया कि ये डुप्लीकेट हैं?"

अंकित का ध्यान तब भी जूतों से नहीं हटा था फिर भी उसने पुनः बड़बड़ाते हुए ही कहा - "पहचान ही तो नहीं है... !" ...फिर अचानक श्यामाचरण से नजरें मिलाते हुए कहा - "अच्छा कोई रसीद, कैश मेमो आपको दिया होगा, वह बताइए।"

श्यामाचरण ने नजरें ऊपर करते हुए याद किया और दूसरे ही क्षण उनके चेहरे पर आश्वस्ति का भाव आया और उन्होंने कहा - "हाँ, अभी दिखाता हूँ।" फिर तेजी से वे अपने कमरे की ओर चले गए। तब तक भी अंकित जूतों को बार-बार उठाकर गौर से देखता रहा।

श्यामाचरण जब लौटे तो उनके हाथ में एक कागज था जिसे वे गौर से चश्मा लगाते हुए देख रहे थे।

"लाइए, मुझे दिखाइए जरा।" अंकित ने कहा तो उन्होंने वह कागज उसे पकड़ा दिया। उसे बाएँ हाथ से अंकित ने पकड़ा और एक नजर डालते ही दाएँ हाथ की चार अँगुलियाँ उस पर मारते हुए कहा - "हंड्रेड परशेंट डुप्लीकेट हैं ये जूते।" उसके चेहरे पर कुछ जीत लेने जैसी खुशी थी।

"तुमने कैसे जाना?" श्यामाचरण ने तत्परता से पूछा।

"पक्की रसीद नहीं दी दुकान वाले ने आपको, इससे जाना।" अंकित की खुशी यथावत थी।

"पक्की रसीद कैसी होती है? ...दुकान का नाम लिखा है, डेट डली है, प्रोपराईटर के दस्तखत हैं और क्या चाहिए?" श्यामाचरण किंचित गुस्से में बोले।

"अरे भाई आप नहीं समझेंगे... पक्की रसीद, जिसे कैश मैमो भी कहते हैं, उसमें टिन नंबर, सेल्स टैक्स नंबर वगैरह छपे रहते हैं, वह इसमें कहाँ हैं?" अंकित ने यह कहते हुए कागज श्यामाचरण को पकड़ा दिया। उसके भाव से लग रहा था और संभवतः वह चाहता भी था कि अब किस्से को खत्म कर दिया जाए।

पहले तो अंकित के चिरपरिचित वाक्य कि 'आप नहीं समझेंगे' पर उन्हें गुस्सा आया फिर उन्होंने जब उसके इस इरादे को भाँप लिया कि वह किस्सा खत्म करना चाहता है, तो उनका गुस्सा और बढ़ गया और उन्होंने वहाँ से चले जाने को तत्पर उसे रोका और कहा - "तो भई इस बेईमानी से निपटना चाहिए... तुम मेरे साथ चलो स्टैंडर्ड शूज तक, इस जूते को तो वापिस करना ही होगा। पैसे मुफ्त में नहीं आते।"

अंकित ने उन्हें आश्चर्य से देखा और दूसरे ही पल उसका चेहरा असमंजस से भर गया, फिर उसने कुछ सोचते हुए और अटकते हुए कहा - "अब... मैं जाकर क्या करूँगा?"

"तुम नहीं करोगे तो और कौन करेगा? ...तुमने अपनी तरह से जाना कि ये जूते डुप्लीकेट हैं तो तुम्हीं तो दुकानदार को यह बताओगे कि नहीं?" अंकित शायद पहली बार अपने पिता को इस तरह बोलते हुए सुन रहा था। उसे अपनी बात उनके सामने रखने में अब किंचित भय महसूस होने लगा, पर उसकी अपनी मजबूरी उसे विवश भी कर रही थी। पिता की गुस्से भरी प्रश्नवाचक निगाहें वह थोड़ी देर तक देखता रहा फिर उसने समझाने की तर्ज में कहा - "ऐसा है पापा, दुकानदार जो है वह इसे वापिस नहीं लेगा क्योंकि उसने अपने बचने की राह पहले ही बना ली है आपको कच्ची रसीद देकर। उसे वापिस करने के लिए लंबी लड़ाई लड़नी पड़ेगी और...।"

वह आगे भी बोलना चाह रहा था पर श्यामाचरण ने बीच में टोकते हुए कहा - "लंबी लड़ाई है तो लड़ेंगे।"

पर उनके इस वाक्य को अनसुना करते हुए उसने आगे कहा - "और रही बात पैसे की तो मैं तो आपसे उसके वेस्ट होने की शिकायत नहीं कर रहा...।"

अब इस बात पर श्यामाचरण ने उसे हिकारत भरी नजरों से घूरते हुए कहा - "बात सिर्फ पैसे की नहीं है।"

"फिर किस चीज की है?" उसने पूछा।

वे एक क्षण के लिए ठिठके फिर निर्णायक स्वर में कहा - "ये तुम नहीं समझोगे। उन्होंने 'तुम' पर विशेष जोर दिया और तकलीफ के बावजूद अपने कमरे की ओर तेज कदमों से चले गए।

अंकित भौंचक सा वहीं खड़ा था।